दैनिक भास्कर

Date:24-12-22

छुट्टियां नहीं सुप्रीम कोर्ट के कामों का महत्व देखें

संपादकीय

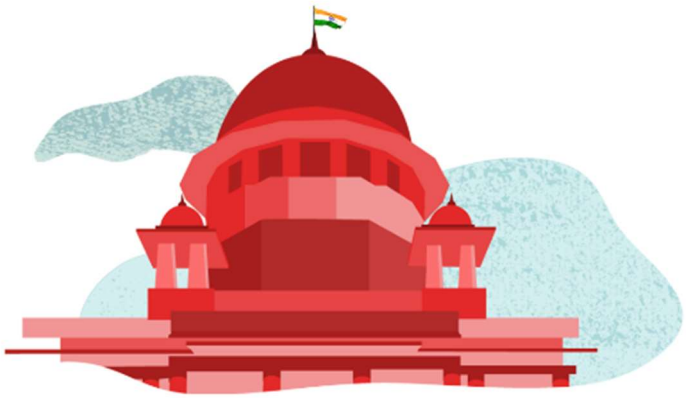

सुप्रीम कोर्ट देश की सबसे बड़ी अदालत है। इसके फैसले अगर हड़बड़ी या हर पहलू को बगैर समझे दिए गए तो लोगों का न्याय से विश्वास उठ जाएगा। एक केन्द्रीय मंत्री की सलाह कि जनता चाहती है सुप्रीम - हाई कोर्ट के जजेस लम्बी छुट्टियों पर जाने की परंपरा बंद करें ताकि ज्यादा केसेस का निपटारा हो सके, शायद ठीक मांग नहीं है। कम ही लोग जानते हैं कि फैसले के पहले जजों को घर पर देर रात तक घंटों तैयारी करनी होती है। कभी सैकडों / हजारों पेज वाले फैसलों में ओबिटर डिक्टा (फैसले का वह भाग जिसमें फैसले तक पहुंचने का कारण होता है) देखें। संवैधानिक पहलू के अलावा सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक यानी लगभग हर आयाम पर गौर करने के बाद ये फैसले दिए जाते हैं। इनमें जजेस की समझ का समुन्नत स्तर देखने को मिलता है। यही कारण है कि भारत की सुप्रीम कोर्ट के तमाम फैसले अमेरिकन, ब्रिटिश और यहां तक कि पाकिस्तानी कोर्ट्स में भी 'कोट' होते हैं। दूसरा इन फैसलों तक पहुंचने में कोर्ट्स को ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है क्योंकि भारत में तथ्यों तक पहुंचने के लिए अपराध अनुसंधान तो छोड़िए, भू-राजस्व रिकॉर्ड में भी टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल नहीं होता। कोर्स में सरकार आधे से ज्यादा केसेस में वादी या प्रतिवादी है, लिहाजा सरकार को भी सोचना होगा कि उसके अभिकरण कहीं शक्ति का बेजा प्रयोग तो नहीं कर रहे हैं।

दैनिक जागरण

Date:24-12-22

हमें चाहिए अपना समावेशी इतिहास

डा. एके वर्मा, (लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

भारतीय संविधान का प्रथम अनुच्छेद कहता है 'इंडिया, दैट इज भारत' अर्थात 'इंडिया, जो भारत है।' तो भारत है क्या? उस भारत का संपूर्ण इतिहास क्या है? क्या हमें भारत और भारत के इतिहास के बारे में बताया गया है? जब भी इतिहास के पुनर्लेखन की बात होती है तो संशय पैदा होता है कि कहीं इतिहास की पुस्तकों से छेड़छाड़ तो नहीं की जाएगी? कुछ विद्वानों को लगता है कि इससे मध्यकालीन इतिहास या मुस्लिम इतिहास को हिंदुत्व के चश्मे से लिखा जाएगा। चाहे मुस्लिम आक्रांता रहे हों या अंग्रेज, दोनों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से इतिहास लिखवाया, जिसमें उन्होंने स्वयं को भारतीय समाज और संस्कृति से श्रेष्ठ दिखाया। स्वतंत्रता के बाद सरकार ने ध्यान नहीं दिया कि आक्रांताओं की ओर से गढ़े गए तथ्यों, विदेशी-कलम और दृष्टिकोण से लिखा इतिहास बच्चों को क्यों पढ़ाया जा रहा है? जैसे-जैसे नए तथ्य और शोध सामने आए, इतिहास के पुनर्लेखन की मांग जोर पकड़ती गई। इंग्लैंड में डेविड ह्यूम ने 18वीं शताब्दी में गंभीर शोध कर 'हिस्ट्री आफ इंग्लैंड' लिखी, जो आज वहां कोई नहीं पढ़ता, क्योंकि नए तथ्यों के आलोक में वह पुस्तक अप्रासंगिक हो गई।

भारत में ऐसा क्यों नहीं हो सकता? क्यों अपने तथ्यों, अपने दृष्टिकोण और अपनी कलम से हम अपना इतिहास नहीं लिख सकते? न्यायपालिका को पारदर्शिता के साथ आत्मदर्शन की राह तलाशनी होगी कोलेजियम पर पुनर्विचार का समय, कोई भी स्वयं के मामले में नहीं हो सकता न्यायाधीश यह भी पढ़ें सच्चा एवं संपूर्ण इतिहास जानना न केवल हमारा मौलिक अधिकार है, वरन हमारी अस्मिता को सम्मान, शक्ति एवं गौरव प्रदान करने का सशक्त माध्यम भी है। इससे हमें अपनी गलतियों, भूलों और सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक विसंगतियों को जानने और सुधारने का अवसर भी मिलेगा। आज समावेशी-राजनीति और समावेशी-विकास की व्यापक चर्चा होती है, पर कोई समावेशी इतिहास की बात नहीं करता। हाल में प्रकाशित 'ब्रेवहार्ट्स आफ भारत' में विक्रम संपत ने इसका उल्लेख किया है। प्रथम, हमारे इतिहास को ऐसे लिखा गया है, जैसे हम पिछड़े, असभ्य और कमजोर समाज रहे हों, लेकिन भारतीय समाज के विकसित स्वरूप और सभ्यता के प्रतिमान बिंदुओं का कोई उल्लेख नहीं। द्वितीय, भारतीय इतिहास मूलतः दिल्ली-केंद्रित है। उसमें दक्षिण भारत के सशक्त चालुक्य, सप्तवाहन, चोल-साम्राज्य, विजयनगर, त्रावणकोर, असम के अहोम, मणिपुर, नगालैंड और अन्य सीमांत प्रदेशों जैसे ओडिशा, बंगाल के गणपति साम्राज्य, मुर्शिदाबाद और बंगाल के नवाबों आदि की कोई चर्चा नहीं। राजपूतों और मराठों के शौर्य, पराक्रम और योगदान को जो स्थान मिलना चाहिए, वह भी नहीं मिला। तृतीय, इतिहास में महिला शासकों जैसे रानी दुर्गावती, गढ़वाल की रानी कर्णावती, मदुरै की रानी मंगम्मल, मराठा रानी ताराबाई, अहिल्याबाई होल्कर और भोपाल की बेगमों के शौर्य-पराक्रम की घोर उपेक्षा की गई है। इतिहास के पुनर्लेखन में इन उपेक्षित आयामों को जोड़ा जाना चाहिए।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने हाल में असम के अहोम साम्राज्य के परमवीर सेनानायक लचित बारफुकन की 400वीं जन्म-शताब्दी पर कहा कि उन्होंने सरायघाट युद्ध में मुगलों को हराया और औरंगजेब का असम में प्रवेश रोका। प्रधानमंत्री का संकेत भारतीय इतिहास को समावेशी बनाने की ओर था। असंख्य रणबांकुरे और वीरांगनाओं को आज कोई नहीं जानता, जैसे कि कश्मीर के ललितादित्य, मेवाड़ के महाराणा कुंभा, गुजरात की रानी नेकीदेवी, अहमदनगर की चांदबीबी, त्रावनकोर के मार्तंड वर्मा और अवध की बेगम हजरतमहल आदि।

भारतीय इतिहासकारों की एक पीढ़ी ने देश के इतिहास के साथ अन्याय किया है। उन्होंने भारतीय इतिहास को बौद्धिक-विमर्श से निकाल कर कभी लोक-क्षेत्र में लाने की चेष्टा नहीं की। परिणामस्वरूप किसी की दिलचस्पी अपने पुरातन इतिहास और उसके वीरों-वीरांगनाओं में नहीं हुई। भारतीय इतिहास को शुष्क विषय के रूप में हमें पढ़ाया गया। भारत में मुगल आक्रांताओं के बाद के इतिहास का 'फोकस' केवल मुगलों पर रहा। अंग्रेजों के आगमन पर वह ब्रिटेन केंद्रित हो गया। भारत बहुत बड़ा देश था, जो असंख्य छोटी-छोटी देसी रियासतों से मिलकर एक राष्ट्र के रूप में रहा है। इन छोटे राज्यों और रियासतों में अनेक का गौरवशाली इतिहास था, लेकिन क्या उनकी कहीं चर्चा होती है? राजनीतिक विमर्श के केंद्र में दक्षिण के राज्यों, पूर्वोत्तर या अन्य छोटे भारतीय राज्यों का कोई अस्तित्व नहीं। स्वतंत्रता के 75 वर्षों बाद भी भारत में राजनीतिक-विमर्श समावेशी नहीं हो सका। क्यों? यही स्थिति इतिहास की है। अब कुछ इतिहासकारों ने इसका बीड़ा उठाया है कि वे भारतीय इतिहास को दिल्ली पर केंद्रित न रखकर उसे समावेशी बनाएंगे। उनके इस प्रयास को हिंदुत्व से जोड़ने का भरपूर प्रयास किया जाएगा, परंतु हमें स्मरण रहे कि विजय अंत में सत्य की ही होगी। भारतीयों को प्रत्येक कालखंड के सच्चे और संपूर्ण इतिहास को जानने का अधिकार है। देश के विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की जिम्मेदारी है कि वे अपने-अपने क्षेत्राधिकार के 'स्थानीय-इतिहास' को छात्रों के लिए अनिवार्य करें, जिससे नई पीढ़ी को अपनी विरासत को जानने और उससे जुड़ने का अवसर मिले। जैसे उत्तर प्रदेश के बहराइच क्षेत्र में राजा सुहेलदेव पासी ने सोमनाथ मंदिर को 17 बार लूटने वाले महमूद गजनवी के सेनापति और हिंदुओं का कत्लेआम करने वाले मसूद गाजी को भयानक युद्ध में मार गिराया था, मगर क्या राजा सुहेलदेव के बारे में बहुत कुछ उल्लेख है? आज जब इतिहास के पुनर्लेखन की बात होती है तो हमें स्पष्ट होना चाहिए कि इसका अर्थ उसे समावेशी बनाने से है। इतिहास के उस अंश को उजागर करने से है, जिस पर पर्दा पड़ा हुआ है, न कि उपलब्ध इतिहास से कोई छेड़छाड़ करने से। जब तक हम भारत के इतिहास को समावेशी नहीं बनाएंगे, उसमें दलितों, पिछड़ों, जनजातियों और सर्व-समाज के वीरों-वीरांगनाओं के योगदान की याद नहीं दिलाएंगे, तब तक हम अपने समाज, राजनीति और विकास को सच्चे अर्थों में समावेशी नहीं बना सकेंगे।

Date:24-12-22

कोलेजियम पर पुनर्विचार का समय

डा. अभय सिंह यादव, (लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा के पूर्व अधिकारी एवं हरियाणा विधानसभा के सदस्य हैं)

हमारे देश की न्यायपालिका विश्व के श्रेष्ठतम न्यायतंत्रों की श्रेणी में उपस्थिति दर्ज करवाती रही है। स्वतंत्रता के उपरांत इसने समय की चुनौतियों से गुजरते हुए अपनी प्रतिष्ठा एवं गरिमा को सुरक्षित रखा है। संविधान ने इसे प्रजातंत्र के प्रहरी की भूमिका में संविधान की रक्षा का दायित्व सौंपा है। सरकार के शेष दोनों अंगों कार्यपालिका एवं विधायिका के कार्य की समीक्षा का दायित्व भी न्यायपालिका के पास है। पूरी व्यवस्था को सुव्यवस्थित एवं सुचारु बनाने के लिए तीनों ही अंगों को परिसीमित करने वाली लक्ष्मण रेखा भी संविधान में निहित है, ताकि सरकार के सभी अंग अपनी-अपनी सीमा में रहते हुए सामंजस्य एवं संतुलन के साथ अपने कार्यक्षेत्र में आगे बढ़ते रहें।

उच्च पदों पर न्यायिक नियुक्तियों की वर्तमान कोलेजियम प्रणाली पर हाल में छिड़ी बहस ने आम जनमानस का ध्यान न्यायपालिका पर केंद्रित किया है। इसलिए और भी अधिक, क्योंकि कोलेजियम को लेकर विभिन्न नेताओं की ओर से संसद के भीतर और बाहर लगातार वक्तव्य दिए जा रहे हैं। निःसंदेह यह एक गंभीर विषय है। मूल रूप से संविधान में न्यायिक नियुक्तियों की एक सुस्पष्ट व्यवस्था उपलब्ध थी, परंतु कुछ परिस्थितिजन्य घटनाओं ने एक ऐसी स्थिति पर पहुंचा दिया, जहां न्यायपालिका ने अपनी न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायिक नियुक्तियों का अधिकार काफी हद तक अपने पास सीमित कर लिया, जिसे कोलेजियम प्रणाली के रूप में जाना जाता है। अब इस कोलेजियम प्रणाली की कुछ सीमाएं रेखांकित होने लगी हैं। यही कारण है कि इस विषय में प्रबुद्ध वर्ग में चिंतन एवं विवेचन का सिलसिला शुरू हुआ है।

केंद्र में भाजपा की पूर्ण बहुमत की सरकार बनने के बाद इस प्रणाली का एक पारदर्शी एवं प्रभावी विकल्प संसद के समक्ष लाया गया और न्यायिक नियुक्ति की इस व्यवस्था को देश की सर्वोच्च विधायिका ने सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान संशोधन विधेयक के जरिये बनाए गए राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के अमल में आने से पहले ही अपने न्यायिक समीक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए उसे निरस्त कर दिया। आम जनमानस के मानस पटल पर इस घटनाक्रम ने अनेक प्रश्न छोड़ दिए। सामान्यतः कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता। इसके लिए हमेशा तीसरे पक्ष से निर्णय की अपेक्षा की जाती है। लगभग पूरी न्यायिक व्यवस्था की एक स्थापित मान्यता है कि यदि किसी मामले से किसी न्यायाधीश का कोई संबंध रहा है तो ऐसे मामलों की सुनवाई से वे स्वयं को अलग कर लेते हैं, किंतु इस मामले में न्यायपालिका ने स्वयं से सीधा संबंध रखने वाले मामले का खुद ही निर्णय कर दिया। यहां यह बात भी स्वाभाविक रूप से आती है कि सर्वोच्च न्यायालय से ऊपर देश में कोई न्यायिक व्यवस्था उपलब्ध ही नहीं है तो इसका निर्णय उसे ही करना था। इसके बाद भी इस विषय पर लीक से हटकर विचार किया जा सकता था, जिसमें इसे मात्र न्यायिक निर्णय मानने की मनोस्थिति से बाहर निकलकर विचार हो सकता था।

संविधान द्वारा देश की न्यायपालिका को न्यायिक समीक्षा का अधिकार देने के बाद भी संविधान की मूल भावना का एक सत्य यह भी है कि प्रजातंत्र का अंतिम सत्य एवं शक्ति प्रजा ही है। देश की संसद इस प्रजा का सीधा प्रतिनिधित्व करने वाली सर्वोच्च सभा है। यही कारण है कि स्वयं संविधान ने इसमें संशोधन का अधिकार केवल संसद को ही दिया है। जब संसद ने विशेष तौर से सर्वसम्मति से एक कानून बना दिया और वह भी जो सीधे तौर पर न्यायिक नियुक्तियों से संबंधित था, तो यह न्यायिक समीक्षा का सामान्य मामला नहीं था, जिसे लागू करने से पहले ही निरस्त करने की जल्दबाजी से बचा जा सकता था। यदि इसे लागू होने के उपरांत समय की कसौटी पर खरा उतरने का अवसर दिया जाता तो यह स्थापित न्यायिक व्यवस्था एवं गरिमा के हित में होता। इसके क्रियान्वयन उपरांत गुण-दोष के आधार पर यदि यह समीक्षा होती तो जनमानस में इसकी स्वीकार्यता कहीं अधिक होती। इस संबंध में एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता की मुख्य आधार शक्ति जन आस्था होती है। यह आस्था न्यायपालिका के निष्पक्ष एवं पारदर्शी न्याय दर्शन का प्रतिबिंब होती है, जिसके अविरल प्रवाह को बनाए रखना स्वयं न्यायपालिका का मूल दायित्व है। जनमानस में तनिक भी संदेह न्यायिक गरिमा के लिए घातक हो सकता है।

अतः न्यायिक नियुक्तियों के विकल्प में न्यायपालिका से अधिक सावधानी बरतने की अपेक्षा है। बेहतर तो यही होगा कि न्यायिक नियुक्तियों के मामले में न्यायपालिका को स्व-संपूर्णता और मुग्धता के भाव से बाहर निकलना होगा। यह कटु सत्य है कि मानव प्रकृति के स्वाभाविक दोषों से कोई भी व्यक्ति या संस्था पूर्ण रूप से मुक्त नहीं रह सकती। ये दोष

मानव स्वभाव के अभिन्न अंग हैं, जिनसे पूर्ण मुक्ति हिमालय की कंदराओं में तपने वाले साधु भी संभवतः प्राप्त नहीं कर सके। अत: किसी भी संस्था को इनसे दूर रखने के लिए व्यवस्थागत छलनी की आवश्यकता है, जिसके मूल में पारदर्शिता हो। अतः न्यायपालिका को पारदर्शिता के साथ आंतरिक समीक्षा के माध्यम से आत्मदर्शन का रास्ता तलाश करना होगा।

जनसत्ता

Date:24-12-22

जिंदगी में जहर घोलता प्लास्टिक

अखिलेश आर्येंदु

चौंकाने और हैरत में डालने वाली बात है- प्लास्टिक की बरसात। मगर आने वाले वक्त में पानी की जगह प्लास्टिक की बरसात होने की बात कह कर वैज्ञानिकों ने हमें अभी से इसके प्रति सावधान कर दिया है। समुद्र की पारिस्थितिकी का हिस्सा बनने वाला यह खास तरह का प्लास्टिक आसमान से बरसने लगा है। वैज्ञानिकों के मुताबिक माइक्रोप्लास्टिक, जिसका आकार पांच मिलीमीटर होता है, जो खिलौनों, गाड़ियों, कपड़ों, कार के पुराने टायर, पेंट आदि में पाया जाता है, हमारे पास से होते हुए समुद्र में पहुंच रहा है। फिर पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा बनकर धरती पर लौट आता है। ये प्लास्टिक के कण नंगी आंखों से नहीं दिखाई देते। यही वजह है कि आम आदमी को इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है। मगर इससे भी ज्यादा हैरत की बात यह है कि हम सबके घरों में माइक्रोप्लास्टिक बहुत बड़ी तादाद में पाए जाते हैं, पर हम इससे अनजान बने रहते हैं। इसकी वजह से हम कई समस्याओं से ग्रस्त हो जाते हैं। अमेरिका की एक विज्ञान पत्रिका के मुताबिक सबसे साफ माने जानी वाली जगह- दक्षिण नेशनल पार्क- की हवा में प्लास्टिक के महीन कणों की बरसात लगातार होती रहती है। गौरतलब है कि इस इलाके में वाहनों और कारखानों की मौजूदगी न होने के बावजूद यहां माइक्रोप्लास्टिक कणों की बरसात लंबे समय तक होती रहती है, जिससे सैकड़ों टन प्लास्टिक धरती पर बिछ चुकी है। यूनिवर्सिटी आफ आकलैंड (न्यूजीलैंड) के वैज्ञानिकों के मुताबिक इलेक्ट्रिक और इलेक्ट्रानिक सामान से पाली कार्बोनेट निकलता है, जो एक तरह का प्लास्टिक ही है। इससे भी हमारी सेहत पर बुरा असर पड़ता है।

वैज्ञानिकों ने 2021 में माइक्रोप्लास्टिक के असर पर शोध के दौरान पाया कि हम रोज लगभग सात हजार माइक्रोप्लास्टिक के टुकड़े अपनी सांस के जरिए लेते हैं। अध्ययन के मुताबिक माइक्रोप्लास्टिक का हम पर वैसा ही असर होता है, जैसा तंबाकू या सिगरेट का होता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि माइक्रोप्लास्टिक हमारी प्रजनन क्षमता पर भी असर डाल रहा है। गौरतलब है कि माइक्रोप्लास्टिक खासकर एकल उपयोगी प्लास्टिक में पाया जाता है, इसलिए ऐसे

प्लास्टिक के इस्तेमाल पर तुरंत रोक लगनी चाहिए। एकल उपयोगी प्लास्टिक से महज हवा प्रदूषित नहीं हो रही, यह पानी-मिट्टी को भी प्रदूषित कर रहा है।

प्लास्टिक उत्पादों में सबसे अधिक उपयोग प्लास्टिक के थैलों (पचास माइक्रोन से कम) का होता है। फिर इसमें पैकिंग फिल्म, फोम वाले कप-प्याले, कटोरे, प्लेट, लेमिनेट किए गए कटोरे और प्लेटें, छोटे प्लास्टिक कप और कंटेनर (डेढ़ सौ मिलीग्राम और पांच ग्राम से कम), प्लास्टिक स्टिक और इयर बड, गुब्बारे, झंडे और कैंडी, सिगरेट के बड, फैलाया हुआ पौलिस्ट्रिन, पेय पदार्थों के लिए छोटे प्लास्टिक पैकेट (दो सौ मिली से कम) और सड़क किनारे लगाए जाने वाले बैनर (सौ माइक्रोन से कम) जैसे प्लास्टिक उत्पाद भी शामिल हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार साधारण प्लास्टिक को सड़ने में लगभग पांच सौ वर्ष लग जाते हैं। सहज उपलब्ध होने के कारण इसका इस्तेमाल बिना सोचे-समझे किया जाता है। दुनिया में इसका महज पांच में से एक हिस्से का पुनर्चक्रण हो पाता है। इस तरह इसका अस्सी प्रतिशत हिस्सा समुद्र में जा रहा है। इसमें माइक्रोप्लास्टिक का हिस्सा सबसे ज्यादा होता है। इससे स्तनधारी जीव असमय मौत का शिकार बनने लगे हैं। एक अनुमान के मुताबिक हर वर्ष करीब एक लाख समुद्री जीव-जंतु मर जाते हैं, जिसमें सील, ह्वेल, समुद्री कछुए, पक्षी सहित अनेक समुद्री जीव-जंतु शामिल हैं।

माइक्रोप्लास्टिक की वजह से कई जीव-जंतु विलुप्त हो गए। उनमें कई नई बीमारियां देखने को मिल रही हैं। समुद्र, नदियों और झीलों का जल प्रदूषित हो गया। इससे ग्रामीण और कस्बाई लोग कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त हो गए हैं। एक सर्वेक्षण के मुताबिक सत्तर के दशक के बाद प्लास्टिक का उपयोग शहरी, ग्रामीण और कस्बाई क्षेत्रों में बढ़ता गया, जो बीमारियों का कारण बन गया है।

'इस्तेमाल करो और फेंको' संस्कृति के कारण प्लास्टिक आज देश ही नहीं, पूरे विश्व में अनेक बीमारियों का कारण बन गया है। लंबे समय तक प्लास्टिक अपघटित नहीं हो पाता, जिसके चलते यह हवा, पानी और मिट्टी को प्रदूषित करता है। उपयोग में आने वाले प्लास्टिक को जलाने से कई तरह की जहरीली गैसें पैदा होती हैं, जिनमें नाइट्रिक आक्साइड, कार्बन डाइआक्साइड और कार्बन मोनोआक्साइड प्रमुख हैं। इन गैसों से फेफड़ों और आंख की बीमारियां, कैंसर, मोटापा, मधुमेह, थायराइड, पेट दर्द, सिर दर्द, कब्ज जैसी अनेक समस्याएं पैदा हो सकती हैं। नए शोध के अनुसार प्लास्टिक से बने बर्तन में गर्म पेय और खाद्य पदार्थों के उपयोग से इसमें मौजूद नुकसानदेह रसायन डाइआक्सिन, लेड (सीसा), कैडमियम आदि खाद्य पदार्थों में घुल कर हमारे शरीर में पहुंच जाते हैं, जिससे पेट, सिर, फेफड़े और आंख से संबंधित समस्याएं पैदा हो जाती हैं। महिलाओं में प्लास्टिक के अधिक उपयोग से बांझपन हो सकता है। यह वनस्पतियों, औषधियों और पेड़ों के विकास पर भी असर डालता है। इसका कारण सिंथेटिक पालीमर नामक पदार्थ है, जो पर्यावरण के लिए बेहद हानिकारक माना जाता है। नदियों, झीलों और समुद्र के किनारे उगी वनस्पतियों और पेड़ों पर यह असर अधिक देखा गया है।

नदियों और समुद्र तटों पर अरबों टन प्लास्टिक कचरा मौजूद है। इस कचरे का पुनर्चक्रण करने का काम भी दुनिया की कुछ कंपनियां कर रही हैं। एक कंपनी ने प्लास्टिक की खाली बोतलों से परिधान बना कर प्रदूषण-मुक्ति की दिशा में एक सफल प्रयोग किया है। इस कंपनी ने जो टीशर्ट तैयार की है, उसको बनाने में सात बोतलें उपयोग में ली जाती हैं। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) के अनुसार 2017-18 में भारत में प्लास्टिक कचरे का छह करोड़ साठ लाख अठहत्तर हजार सात सौ पचासी टन अंबार लग गया था। एकल उपयोगी प्लास्टिक से फैलने वाले प्रदूषण से निपटने के लिए एक

टिकाऊ विकल्प तैयार किया जाए। दूसरे, प्लास्टिक का ऐसा रूप तैयार किया जाए, जो प्रदूषण न फैलाए, बल्कि प्रदूषण से मुक्ति दिलाने में भूमिका निभाए। अभी यह विकल्प केवल कल्पना है, लेकिन इस दिशा में कई कंपनियां और देश आगे बढ़ रहे हैं। जूते बनाने वाली एक कंपनी ने 2018 में प्लास्टिक कचरे से पचास लाख जोड़ी जूते तैयार किए। इसमें जो प्लास्टिक उपयोग किया गया, वह पोस्ट-कम्यूमर रिसाइक्लिड (PCR) प्लास्टिक था, जो महासागरीय तटों और तटीय क्षेत्रों से इकट्ठा किया गया। वैज्ञानिकों के अनुसार वैश्विक ताप का कारण प्लास्टिक प्रदूषण भी हो सकता है।

केंद्र सरकार ने पर्यावरण दिवस पर घोषणा किया था कि एकल उपयोगी प्लास्टिक को चरणबद्ध तरीके से 2022 तक चलन से बाहर किया जाएगा, लेकिन तमाम प्रतिबंधों की घोषणा के बावजूद यह संभव नहीं हो पाया। राष्ट्रीय और संगठनात्मक स्तर पर 2025 तक प्लास्टिक से होने वाले प्रदूषण को कम करने का लक्ष्य रखा गया है। केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने एकल उपयोगी प्लास्टिक को राज्य स्तरीय नियम बना कर प्रतिबंधित करने का कार्य किया, वहीं कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भी 2025 तक पैकेजिंग में सौ फीसद पुनर्चक्रित उत्पाद का प्रयोग करने की घोषणा की। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, पंजाब, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और हरयिाणा सहित देश के अनेक राज्यों में प्लास्टिक कचरे पर प्रतिबंध लगाया जा चुका है, लेकिन व्यावहारिक जिंदगी में एकल उपयोगी प्लास्टिक का चलन ज्यों का त्यों है। अगर एकल उपयोगी प्लास्टिक को चलन से बाहर नहीं किया गया, तो माइक्रोप्लास्टिक बरसात से जो मानव सभ्यता का नुकसान होगा, वह हमारी कल्पना से बाहर हो सकता है।